कोपेनहेगन शिखर सम्मेलन

साम्राज्यवादी मुल्कों ने की अपनी मनमानी

जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर बहुचर्चित कोपेनहेगन सम्मेलन आखिर बिना किसी ठोस समझौते के समाप्त हो गया। आखिर में जो समझौता हुआ उसमें मात्र 28-30 देशों की सहमति थी। इस समझौते का ग्रुप-77 सहित सभी ग़रीब विकासशील देशों ने विरोध किया। इस समझौते में न तो जलवायु परिवर्तन पर कोई ठोस बाध्यकारी नियम हैं, न ही कोई ठोस लक्ष्य। अब तक जलवायु परिवर्तन के संबंध में क्योटो प्रोटोकोल से लेकर बाली कन्वेंशन तक जितनी बाध्यतायें विकसित मुल्कों पर थीं, उनसे छुटकारा पाने में विकसित मुल्क सफल हो गये। ग़रीब देश बहुसंख्यक होते हुए भी ठगे गये।

जलवायु परिवर्तन मुद्दे की गंभीरता : 90 के दशक के बाद से ही जलवायु परिवर्तन मुद्दे की गंभीरता का अहसास वैश्विक स्तर पर महसूस किया जाने लगा। पृथ्वी के पारिस्थिकी तंत्र में बदलाव स्पष्ट नज़र आने लगे। पृथ्वी के वातावरण में तापमान में वृद्धि, ग्लेशियरों का आकार सिकुड़ना तथा उनकी हिमराशि का कम होना, ग्लेशियरों के पिघलने से समुद्र की सतह का ऊपर उठना, द्विपीय तथा समुद्र तटीय देशों की ज़मीन का समुद्र द्वारा लील लिया जाना, मानसून चक्र में परिवर्तन, अति वृष्टि, कृषि उत्पादन में गिरावट, अधिक बारंबारता के साथ सूखे का प्रकट होना आदि लक्षण जलवायु परिवर्तन की गंभीरता को दर्शाते हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारण : जलवायु परिवर्तन के लिए मुख्यत: पृथ्वी के वातावरण में ग्रीन हाउस गैसों के अत्यधिक उत्सर्जन को जिम्मेदार माना जाता है। ग्रीन हाउस गैसों में कार्बन डाय ऑक्साइड, मीथेन सहित 61 गैसें आती हैं। इनमें सर्वाधिक मात्रा कार्बन डाय ऑक्साइड की है। हालांकि मीथेन कार्बन से कई गुणा अधिक हानिकारक है। ये गैसें ईंधन के दहन, औद्योगिक एवं परिवहन की गतिविधियों के दौरान उत्सर्जित होती हैं। भारी होने के कारण ये गैसें पृथ्वी के वातावरण में काफ़ी नीचे रह जाती हैं। ये गैसे उष्मा की कुचालक होने के चलते सूरज द्वारा प्राप्त पृथ्वी की उष्मा को वापस वायुमंडल में लौटने नहीं देतीं। ये वायुमंडल के ऊपर एक ऐसी परत का निर्माण कर लेती हैं जो नर्सरी में फूल-पौधों को तेज़ गर्मी व ठंड से बचाने के लिए निर्मित ग्रीन हाउस के समान कार्य करती हैं। इसीलिए इनको ग्रीन हाउस गैसें कहते हैं। इन गैसों की बढ़ती मात्रा के चलते पृथ्वी के वातावरण में तापमान में वृद्धि हो रही है। यह बात वैज्ञानिकों के हवाले से सामने आई है कि औद्योगिक क्रांति के बाद से पृथ्वी के वायुमंडल का औसत तापमान 0.8 सेलसियस बढ़ गया है। वायु प्रदूषण अथवा पृथ्वी के वातावरण में उत्सर्जन की मात्रा इसी गति से जारी रही तो सन् 2050 तक पृथ्वी के वातावरण का तापमान 2 डिग्री सेलसियस तक बढ़ जायेगा। उस स्थिति में हिमालय समेत आर्कटिक के बर्फ गायब हो जायेगी। कई हरे-भरे इलाके रेगिस्तान में तब्दील हो जायेंगे तथा समुद्र का स्तर काफ़ी बढ़ जायेगा जिसके चलते कई द्विपीय तथा समुद्र तटीय देशों का अस्तित्व खत्म हो जायेगा। यानी कुल मिला कर पृथ्वी पर जीवन व मानव सभ्यता के लिए गंभीर खतरा पैदा हो जायेगा।

जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर अभी तक की प्रगति : पृथ्वी के वातावरण में ग्रीन हाउस गैसों के सर्वाधिक उत्सर्जन के लिए साम्राज्यवादी विकसित मुल्क जिम्मेदार रहे हैं। लेकिन पर्यावरण को प्रदूषित करने में सर्वाधिक योगदान करने के बावजूद वे इस मामले में कोई जिम्मेदारी-जवाबदेही या नियंत्रणबद्धता के लिए तैयार नहीं हैं। अमेरिका अभी हाल तक ग्रीन हाउस गैसों का सबसे बड़ा उत्सर्जक रहा है। ऐतिहासिक तौर पर अमेरिका कार्बन डाय ऑक्साइड के कुल उत्सर्जन के एक-तिहाई हिस्से के लिए जिम्मेदार रहा है। चीन इस समय 19 प्रतिशत ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के कारण पहले स्थान पर है। हालांकि ऐतिहासिक तौर पर उसका योगदान 7-8 प्रतिशत ही है। भारत 5 प्रतिशत ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार है, लेकिन ऐतिहासिक तौर पर इसका योगदान एक-दो प्रतिशत ही है।

जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन ने इस बात को स्वीकार किया है कि विकसित मुल्क चूंकि ग्रीन हाउस उत्सर्जन के लिए सर्वाधिक जिम्मेदार रहे हैं, अत: कन्वेंशन ने जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर साझी परंतु विभेदीकृत जिम्मेदारी की बात की। इसका मतलब यह हुआ कि जलवायु परिवर्तन के लिए ऐतिहासिक तौर पर अधिक जिम्मेदार साम्राज्यवादी विकसित मुल्क उत्सर्जन पर रोक लगायेंगे तथा विकासशील मुल्कों को इस संबंध में उत्सर्जन रोकने के लिए आवश्यक तकनीक एवं वित्तीय मदद उपलब्ध करायेंगे।

यही बात 1997 में जापान के क्योटो शहर में जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर हुए ऐतिहासिक सम्मेलन में हुई थी। इस सम्मेलन में एक संधि पर हस्ताक्षर किये गये जो क्योटो प्रोटोकोल कहा गया। क्योटो प्रोटोकोल पर 187 देशों ने हस्ताक्षर किये थे तथा 37 देशों ने बाध्यकारी शर्तें स्वीकार की थीं। गौरतलब है कि ग्रीन हाउस गैसों के सर्वाधिक उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार अमेरिका ने क्योटो प्रोटोकोल पर हस्ताक्षर नहीं किये थे।

क्योटो प्रोटोकोल के तहत हस्ताक्षरी विकसित मुल्कों को 2010 तक अपने उत्सर्जन में कटौती करनी थी और कटौती की मात्रा को आगे और भी बढ़ाना था। इसमें उत्सर्जन रोकने के लिए प्रारंभिक कदम होने के चलते लक्ष्य अपेक्षाकृत कमजोर रखे गये थे। विकासशील देशों के लिए कोई लक्ष्य नहीं रखा गया था। विकसित देशों से यह अपेक्षा की गई थी वे विकासशील देशों को उत्सर्जन रोकने के लिए तकनीक व वित्तीय मदद मुहैया करायेंगे। चूंकि क्योटो प्रोटोकोल की अवधि 2012 तक ही थी, अत: जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर एक व्यापक सुदीर्घ अवधि वाली संधि की जरूरत महसूस की जा रही थी। खास कर ग़रीब तीसरी दुनिया और सागर तटीय व द्विपीय देश जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर सर्वाधिक मुखर और संवेदनशील थे। साम्राज्यवादी विकसित देशों द्वारा पर्यावरण को पहुंचाई गई भारी क्षति को सबसे ज़्यादा ये ही देश झेल रहे हैं।

कोपेनहेगेन शिखर सम्मेलन से यह उम्मीद थी कि जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर अब तक हुई प्रगति को आगे ले जाते हुए वह इस मामले में एक मील का पत्थर साबित होगा। लेकिन दुनिया भर के लोग़ों की, बहुसंख्यक देशों की जो भी भावना हो, सच तो यह है कि दुनिया में सब कुछ साम्राज्यवादी मुल्क ही तय करते हैं। उस पर भी आज जो अमेरिका चाहे, वही नीति बन जाती है। कम से कम कोपेनहेगेन में यही बात सामने आयी।

कोपेनहेगेन शिखर सम्मेलन के निहितार्थ : कोपेनहेगेन शिखर सम्मेलन को ले कर वैश्विक स्तर पर जो उत्साह एवं गहमागहमी थी, उसका अंत एक ठंडी पराजित मुहिम में हुआ। कोपेनहेगेन शिखर सम्मेलन से यह उम्मीद थी कि क्योटो प्रोटोकोल से आगे बढ़ने तथा एक प्रदूषणविहीन दुनिया बनाने के प्रयास में यह एक मील का पत्थर साबित होगा। यह उम्मीद की जा रही थी ग्लोबल वार्मिंग के खतरे के प्रति वैश्विक स्तर पर जो चिंता पूरी दुनिया के स्तर पर उभरी है, वह पर्यावरण को बचाने के लिए स्पष्ट व ठोस नीति के रूप में कोपेनहेगेन में अपने आप को अभिव्यक्त करेगी।

लेकिन दुनिया के स्तर पर आज न तो नीतियां समाज व जीवन के प्रति सरोकारों से तय होती हैं, न ही वैश्विक मंचों पर जो बहस व मुद्दे छाये रहते हैं, उनके पीछे वास्तविक चिंतायें होती हैं। आज की साम्राज्यवादी-पूंजीवादी दुनिया में वैश्विक स्तर पर जो भी नीतियां व कार्यक्रम तय होते हैं, वह मुनाफ़े के गणित से तय होते हैं। साम्राज्यवादी वित्तीय पूंजी ही अपने हितों के हिसाब से दुनिया को चलाना चाहती है और चलाती है।

कोपेनहेगन में जो कुछ तमाशा हुआ उसमें साम्राज्यवादी-पूंजीवादी मुल्कों के आपसी हितों की खींचतान के अलावा कुछ नहीं हुआ। जलवायु परिवर्तन के कारण सबसे अधिक नुकसान उठाने वाले ग़रीब मुल्क बहुसंख्यक होने के बावजूद नीति निर्धारण में हाशिये पर थे। अंत में पर्यावरण के मुद्दे पर सबसे बड़ा खलनायक संयुक्त राज्य अमेरिका ही नीति नियंता साबित हुआ। सम्मेलन के आखिरी क्षणों में ओबामा ने कुछ बड़े विकासशील देशों मसलन भारत, दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील और चीन जैसे मुल्कों के साथ मोलतोल कर के तथा यूरोपीयन यूनियन के कुछ मुल्कों को साथ ले कर पर्यावरण के मुद्दे पर अब तक हुई प्रगति को दफ़ना दिया। क्योटो प्रोटोकोल का अंतिम संस्कार किया गया। उत्सर्जन घटाने के न तो कोई लक्ष्य तय किये गये, न कोई समय-सीमा तय की गई, न कोई दंड विधान लागू हुआ और न ही कोई संकल्प लिया गया। ले-दे कर 28-30 देशों ने 170 से अधिक ग़रीब देशों को अपना फर्मान सुना दिया। क्योटो प्रोटोकोल के तहत विकासशील देशों को उत्सर्जन रोकने के लिए जो तकनीकी व वित्तीय सहायता विकसित देशों द्वारा उपलब्ध करानी थी, उसमें भी तमाम किंतु-परंतु जोड़ कर इसे संबंधित मुल्कों - दाता-प्राप्तकर्ता की आपसी समझ पर छोड़ कर इसे महत्वहीन बना दिया गया।

कुल मिला कर कोपेनहेगेन सम्मेलन ने एक बार फ़िर साबित किया कि जब तक पूंजीवादी-साम्राज्यवादी व्यवस्था बरकरार रहेगी, तब तक पर्यावरण के मुद्दे पर कोई संजीदगी भरे प्रयास नहीं हो सकते। पूंजीवादी-साम्राज्यवादी विश्व व्यवस्था के खात्मे के साथ ही पर्यावरण की सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सकता है।

▯ नृगेन्द्र

महंगाई : व्यवस्था को उखाड़ फेंकने की जरूरत

बढ़ती महंगाई से इस देश की जनता अब तंगहाल हो चुकी है। महंगाई अब सभी सीमाओं को पार करती जा रही है। विशेषकर खाद्य पदार्थों और सामान्य उपभोक्ता वस्तुओं की दिन-ब-दिन चढ़ती कीमतों ने लोग़ों का जीना मुहाल कर दिया है। वैसे इस महंगाई से मध्यम वर्ग और उच्च मध्यम वर्ग के लोग़ों को कोई खास परेशानी नहीं है, पर निम्न मध्यम वर्ग के लोग़ तो बेहाल हो चुके हैं। इसके अलावा उन लोग़ों की हालत तो दयनीय हो चुकी है जो मज़दूरी एवं अन्य छोटे-मोटे काम कर के गुज़ारा करते हैं।

हरियाणा सरकार ने अकुशल मज़दूरों के लिये न्यूनतम मज़दूरी मासिक 3510 रुपये निर्धारित की है, लेकिन यह राशि कितने मज़दूरों को मिल पाती है, इस संबंध में लेबर डिपार्टमेंट और मज़दूर यूनियनों को अच्छी तरह पता है। आज 70 से 80 प्रतिशत तक मज़दूर ठेके पर काम करते हैं और उनकी कमाई का एक अच्छा-खासा हिस्सा ठेकेदार हड़प लेता है। अगर मज़दूर उन्हें कमीशन न दें तो ठेकेदार काम से उनकी छुट्टी कर देगा, फ़िर वे आधा पेट खा कर और गुदड़ी पहन-ओढ़ कर जानवरों जैसा जो जीवन व्यतीत करते हैं, वो भी न कर पायें और सीधा सड़क पर आ जायें। जहां तक महिला मज़दूरों का सवाल है, उनकी स्थिति और भी बदहाल है। उन्हें 1500 से लेकर 2000 रुपये मासिक मिलते हैं। कोई भी समझ सकता है इतने कम पैसों में कोई अपने पूरे परिवार के साथ कैसे गुज़ारा कर सकता है।

इस तथ्य का मीडिया में बार-बार उल्लेख किया जाता रहा है कि देश की 77 फ़ीसदी आबादी महज़ 20 रुपये रोज़ाना पर जीने के लिये मजबूर है। उनके हाल पर कुछ लिखना व्यर्थ ही है। लेकिन यह समझ जाना चाहिए कि जिस देश की 77 फ़ीसदी आबादी की रोज़ाना आमदनी महज 20 रुपये है, वहां के समाज में कितना तनाव और कितनी पतनशीलता होगी। बढ़ती महंगाई के संदर्भ में यह वर्ग कंगाली के कगार पर खड़ा है। देश की आबादी का इतना बड़ा हिस्सा कोई राजनीतिक दिशा मिलने पर कितना विस्फोटक रूप धारण करेगा, यह बात शासकों को समझ लेनी चाहिए। बढ़ती महंगाई का सामना करने में यह वर्ग पूरी तरह अक्षम है और इस वर्ग से आवारागर्दों की ऐसी फ़ौज तैयार हो रही है जो आने वाले दिनों में शीघ्र ही 'रोटी-रोटी' की पुकार के साथ सड़कों पर उतर आयेगी। गांवों से लेकर शहरों तक में भूख की धधकती आग पूरे सामाजिक ताने-बाने को जला कर राख कर देगी।

> **"जहां तक महंगाई का सवाल है, यह तो बाज़ार की आसुरी शक्तियों की एक मामूली-सी कार्रवाई है - लूट और मुनाफ़े के लिए। पर यह बाज़ारवादी व्यवस्था तो रोज़ ज़िंदा मनुष्यों को ख़रीद-बेच रही है। इस व्यवस्था में उस व्यक्ति का कोई मूल्य नहीं जो बिक न सके और जिसे ख़रीदा न जा सके।"**

'क्रांति' की पुकार चारो ओर से उठ खड़ी होगी, फ़िर उस 25 फ़ीसदी आबादी का क्या होगा जिसमें दस फ़ीसदी आबादी स्वर्ग का सुख लूट रही है। जाहिर है, इस दस फ़ीसदी आबादी - पूंजीपति, राजनेता और उच्च मध्यम वर्ग को अपना स्वर्ग छोड़ना पड़ेगा और उत्पादन प्रक्रिया में एक श्रमिक की तरह लगना पड़ेगा।

उनके विशेषाधिकार समाप्त हो जायेंगे। पर इसके लिये पहले जरूरी है वर्तमान शासन व्यवस्था को जड़ सहित उखाड़ फेंकना और वास्तविक समता की आधारशिला पर हर तरह के शोषण की संभावनाओं को समाप्त करते हुए एक नवीन शासन की व्यवस्था करना जिसमें हर व्यक्ति अपनी जिम्मेवारी को पारिवारिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्तर पर समझने को तैयार हो।

जाहिर है, जब श्रमशील जनता के अतिरिक्त उत्पादन को हड़पने वाला कोई नहीं होगा तो उस अतिरिक्त उत्पादन के मूल्य से भांति-भांति के नवनिर्माण हर क्षेत्र में संभव हो सकेंगे। इस पर श्रमशील जनता का अधिकार होगा। नई तकनीक की खोज और नई मशीनों के इस्तेमाल से बेरोज़गारी की समस्या उत्पन्न नहीं होगी, बल्कि उत्पादन-प्रक्रिया में इससे बढ़ावा मिलेगा। लोग़ों के काम करने के घंटे कम होंगे। भूख, वस्त्र और आवास की कोई समस्या नहीं रह जायेगी और अपने बचे हुए समय में लोग़ सांस्कृतिक, वैज्ञानिक और आध्यात्मिक चिंतन कर सकेंगे। अपनी असीम जिज्ञासाओं को शांत करने के लिये उनके पास पूरा वक्त होगा और ऐसे समाज में बाज़ार का कोई आधिपत्य नहीं रह जायेगा। जाहिर है, ऐसी समाज-व्यवस्था में नशाखोरी, वेश्यावृत्ति और नाना प्रकार के अपराध स्वयं समाप्त हो जायेंगे। पर ऐसी व्यवस्था के निर्माण के लिए भीषण संघर्ष की जरूरत होगी, क्योंकि सत्ता पर कुंडली मार कर बैठे पूंजीपतियों के प्रतिनिधियों के पास दमनकारी शक्ति की कमी नहीं है। फ़िर इतिहास में इस बात के जीवंत उदाहरण मौजूद हैं कि जब जनता जागृत हो जाती है और अपने भविष्य की दिशा को तय करने के लिए तैयार खड़ी हो जाती है तो राजसत्ता की बड़ी से बड़ी दमनकारी शक्तियां भी चकनाचूर हो जाती हैं। लेकिन जनता अगर बेबस, निस्सहाय और आत्मगौरवहीन दशा में पड़ी होती है तो दमनकारी ताकतें उसका स्वत्व निकाल लेती हैं, उसके रक्त को पीने लगती हैं, उसकी मांस-मज्जा और हड्डियों तक को चबा डालती है।

आज ऐसी ही स्थिति आ गई है। जनता को अंतिम हद तक लूटने वाली विश्व की सारी ताकतें एकजुट हैं। पर जनता बिखरी हुई निस्सहाय अवस्था में पड़ी हुई है। जनता का संघर्ष टुकड़े-टुकड़े में होने के कारण वह दमन-शोषण की दानवी ताकतों से टकरा नहीं पाती।

जहां तक महंगाई का सवाल है, यह तो बाज़ार की आसुरी शक्तियों की एक मामूली-सी कार्रवाई है - लूट और मुनाफ़े के लिए। पर यह बाज़ारवादी व्यवस्था तो रोज़ ज़िंदा मनुष्यों को ख़रीद-बेच रही है। इस व्यवस्था में उस व्यक्ति का कोई मूल्य नहीं जो बिक न सके और जिसे ख़रीदा न जा सके।

▯ मनोज